|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 15: पुरुषोत्तमयोग

1/2 (श्लोक 1-6), शनिवार, 05 अक्टूबर 2024

विवेचक: गीता प्रवीण ज्योति जी शुक्ला

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/YeJI77YSoxg

"अश्वत्थ वृक्ष रुपी संसार "

प्रारम्भिक प्रार्थना, दीप प्रज्वलन एवं गुरु वन्दना के साथ सत्र का प्रारम्भ हुआ। विवेचन को रोचक बनाने के लिए संवादपरक बनाया गया।

प्रश्न - बारहवें अध्याय में भक्तों के कितने लक्षणों की बात हुई थी?
उत्तर - बारहवें अध्याय में भक्तों के उनतालीस लक्षणों की बात हुई थी।
बाईस प्रतिशत बच्चों ने सही उत्तर दिया।

आज के अध्याय का नाम है **"पुरुषोत्तमयोग"।**

पुरुषोत्तम का अर्थ होता है पुरुषों में उत्तम। जिसमें कोई बुराई न हो, हर काम में अच्छे हों। हम अपने जीवन (Life) में नायक (hero) ही बनना चाहते हैं, जैसे महाभारत के हीरो थे अर्जुन और विलेन (villan)/खलनायक दुर्योधन। हम सब भी अर्जुन जैसा ही बनना चाहते हैं। अर्जुन की तरह बनने के लिए हमें श्रीमद्भगवद्गीता में कही गई बातों को जीवन में लाना होगा। हमारे माता-पिता देवी-देवताओं के नाम पर हमारे नाम रखते हैं, जैसे- ओम, शिव, शिवा, उत्कर्ष आदि। जब वे हमें पुकारें तो इस तरह श्रीभगवान का स्मरण हो, श्रीभगवान का नाम लिया जा सके। अच्छे विचार मन में आएँ।

क्या कभी आपने रावण चौधरी नाम सुना है? नहीं सुना होगा, क्योंकि जिन्होंने बुरे काम किए हम उन्हें याद भी नहीं करना चाहते। उनकी बात करने या उन्हें याद भी करने से हमारे मन में बुरे विचार आते हैं।

हमें उत्तम बनने के लिए क्या करना होगा? यह बात हम इस अध्याय में समझेंगे। अर्जुन के द्वारा प्रश्न किए जाने पर श्रीभगवान उसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि यह जो संसार है, इसे तुम उल्टे वृक्ष की तरह मानो, कल्पना करो। उदाहरण के लिए जैसे हम एक पेज पर पेड़ का चित्र बनाएँ और उस पेज को उल्टा कर दें तो पेड़ नीचे की ओर हो जायेगा अर्थात् उसके पत्ते नीचे की ओर हो जाएँगे और जड़ ऊपर की ओर। अब इस उल्टे वृक्ष का, कौन सा भाग कैसा है? क्या है? यह समझेंगे। संसार की तुलना एक उल्टे वृक्ष से की है। हम सभी को पता है पेड़ का कौन-कौन सा भाग हम किन-किन रूपों में प्रयोग में लाते हैं। घर बनाने में, भोजन में, औषधि के रूप में।

अब देखते हैं पेड़ के कौन-कौन से भाग होते हैं? पेड़ में- पत्ते, तना, फूल, बीज, फल, शाखाएँ एवं जड़ होती है। हम कुछ बीज खाते हैं, जैसे मटर। पत्ते खाते हैं, जैसे मेथी, पालक, पुदीना, चौलाई आदि। जड़ खाते हैं, जैसे गाजर, मूली आदि। फूल भी खाते हैं, जैसे गोभी। फल खाते हैं, जैसे आम, सेब आदि। घर बनाने में पेड़ का उपयोग होता है। पशु-पक्षी पेड़ों पर घोंसला बनाकर रहते हैं। प्रतिदिन हम पेड़ों का उपयोग किसी न किसी रूप में करते हैं।

15.1

श्रीभगवानुवाच
ऊर्ध्वमूलमधः(श्) शाखम्, अश्वत्थं(म्) प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि, यस्तं(वँ) वेद स वेदवित्॥15.1॥

श्रीभगवान् बोले – ऊपर की ओर मूल वाले (तथा) नीचे की ओर शाखा वाले (जिस) संसार रूप अश्वत्थ वृक्ष को (प्रवाह रूप से) अव्यय कहते हैं (और) वेद जिसके पत्ते हैं, उस संसार-वृक्ष को जो जानता है, वह सम्पूर्ण वेदों को जानने वाला है।

विवेचन- श्रीभगवान यहाँ संसार का स्वरूप अर्जुन को समझाने जा रहे हैं।

ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर की ओर, मूल जहाँ से शुरुआत होती है।

अश्वत्थ मतलब **पीपल** का पेड़। **अश्वत्थ** का एक और अर्थ होता है- **चञ्चल**।

अश्वत्थ का एक और अर्थ होता है, वह जिसमें लगातार परिवर्तन हो रहा है- **परिवर्तनशील**।

हमारा शरीर, हमारी आयु, हमारा रूप-रङ्ग सब कुछ निरन्तर बदल रहा है। हमारे खाने-पीने का तरीका बदल जाता है।

दो चीजें सबसे अधिक चञ्चल मानी जाती हैं। एक तो पीपल का वृक्ष, पीपल के पेड़ के पत्ते बिना हवा के भी हिलते रहते हैं, दूसरा हमारा मन। वास्तविकता में भले हम कहीं न जा पाएँ लेकिन बैठे-बैठे हमारा मन हमें अमेरिका, लन्दन, कहीं भी पहुँचा देता है। मन के द्वारा हम कईं आकृतियाँ बना लेते हैं, जैसे बड़ी-बड़ी इमारतें (building)। हम भी लगातार बदलते जा रहे हैं। यदि मैं आपसे पूछूँ आप कितने साल के हैं? आप कहेंगे ग्यारह वर्ष, दो माह, दस दिन, चार घण्टे, पर अगले ही क्षण आप बदल रहे हैं। यही बात यदि मैं कल पूछूँ तो उसमें एक दिन और बढ़ जाएगा। इसी तरह संसार लगातार परिवर्तनशील है। कुछ भी स्थिर नहीं है। **Nothing is stable.**

अव्ययम्- अविनाशी, जिसे नष्ट नहीं किया जा सकता या जो नष्ट नहीं होता है। एक पेपर ले लो और उसे नष्ट करने का प्रयास करो। आप उसे फाड़ देंगे या जला देंगे। जलाने के बाद भी उसकी राख बच जाएगी। वह पूर्णतः नष्ट नहीं होगा, उसका रूप बदल जाएगा। जो यह संसार रूपी पेड़ है, इसके रूप में परिवर्तन होता है। मान लो कि हमारे घर के बाहर पेड़ था। हमने उसे काट दिया तो भी वह नष्ट नहीं हुआ, उसके रूप में परिवर्तन हुआ है। उस पेड़ की लकड़ी को किसी न किसी कार्य में उपयोग में ले लिया जाएगा, जैसे घर बनाने में, ईंधन के रूप में आदि।

संसार रूपी पेड़ के तने को ब्रह्माजी मान लेते हैं और उसके पत्तों को वेद मान लेते हैं। पेड़ के पत्ते हम नहीं गिन सकते इसलिए पत्तों को वेद कहा गया है। यदि यह कहें कि हमें विज्ञान (science) में भौतिक शास्त्र (physics) बहुत अच्छे से आती है, तो क्या हम बहुत ज्ञानी (knowledgeable) हो गए? हमें केवल विज्ञान के एक भाग का थोड़ा सा ज्ञान है।

जो इस पेड़ रूपी संसार को जान जाता है, उसे ज्ञानी कहते हैं।
ज्ञान की कोई सीमा नहीं होती है, यह अनन्त होता है। **Knowledge is infinite.**

हमारे जो स्क्रिप्चर्स, (scriptures) हैं, वे चार वेद माने जाते हैं। **ऋग्वेद**, **यजुर्वेद**, **सामवेद और अथर्ववेद**।

जिसे बहुत कुछ पता होता है उसे बहुत कुछ नहीं भी पता होता है। हमें जो ज्ञान होता है वह एक सुई की नोंक के बराबर होता है क्योंकि ज्ञान की कोई सीमा नहीं है।

इस बात को हम एक कहानी के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं। एक बार पाँच अन्धे थे। उनके मास्टरजी ने कहा कि मैंने एक बहुत बड़ा हाथी देखा। चलो तुम्हें हाथी दिखाने ले चलते हैं। उनमें से एक अँधा व्यक्ति पूँछ को पकड़ता है। वह सोचता है कि मास्टर जी ने तो कहा था हाथी बहुत बड़ा है पर यह तो रस्सी जैसा है। दूसरे व्यक्ति ने सूँड को पकड़ लिया। उसे वह साँप जैसा अनुभव हुआ। वह सोचने लगे कि यह क्या? यह तो साँप जैसा है। तीसरे व्यक्ति ने हाथी के पैर को पकड़ लिया। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि यह तो खम्भे जैसा है। चौथा व्यक्ति हाथी के पेट के नीचे खड़ा हो जाता है और वह हाथी के पेट को छूता है। उसे लगता है कि हाथी छत के जैसा है। पाँचवा अँधा व्यक्ति हाथी के कान को छूता है। उसे लगता है कि यह तो सूप (सूपड़ा) जैसा है। जब वे लौट कर आते हैं तो मास्टर जी उनसे पूछते हैं कि हाथी कैसा था? सब अपने-अपने अनुभव के अनुसार बताते हैं। उनमें बहस हो जाती है, सब अपनी बात को सच मानते हैं।

हम भी ऐसा ही करते हैं। थोड़ा सा ज्ञान होने पर बहस करने लगते हैं कि नहीं, मैं ही सही हूँ। संसार में बहुत सारा ज्ञान है। जो इस पेड़ रूपी संसार को जान जाता है, उसे ही ज्ञानी कहते हैं।

15.2

अधश्चोर्ध्वं(म्) प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।।2।।

उस संसार वृक्ष की गुणों (सत्त्व, रज और तम) के द्वारा बढ़ी हुई (तथा) विषय रूप कोंपलों वाली शाखाएँ नीचे, (मध्य में) और ऊपर (सब जगह) फैली हुई हैं। मनुष्यलोक में कर्मों के अनुसार बाँधने वाले मूल (भी) नीचे और (ऊपर) (सभी लोकों में) व्याप्त हो रहे हैं।

विवेचन- अब हम इस पेड़ के आकार को देखेंगे कि वह दिखता कैसा है? यह उल्टा पेड़ है। इसकी कुछ शाखाएँ ऊपर की ओर जा रही हैं, कुछ शाखाएँ नीचे की ओर जा रही है। जडें ऊपर हैं, पत्ते नीचे हैं और तना बीच में है।

श्रीभगवान कह रहे हैं कि इसका जो मूल अर्थात् जड़ है, वह मैं हूँ। संसार की रचना श्रीभगवान ने की है।

हमें कुछ समस्या होती है तो हम श्रीभगवान से ही मदद माँगते हैं। ऊपर की ओर ही देखते हैं। सबसे उच्चतम स्थान पर श्रीभगवान हैं। इसका तना ब्रह्माजी हैं। श्रीविष्णु जी की नाभि से ब्रह्माजी की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा जी ने संसार की रचना की। हमारे जीवन में सङ्गीत आ जाए इसलिए सरस्वती जी आई। ब्रह्मा जी ने तीन गुणों का सृजन किया। सात्त्विक, राजसिक एवं तामसिक।

सात्त्विक- अर्थात् जब हमारे मन में अच्छी बातें आती हैं, अच्छे भाव होते हैं। हम अच्छा काम करते हैं, तो वह सात्त्विक गुण कहलाता है।

राजसिक अर्थात् जब हम बहुत ज्यादा कार्यरत होते हैं। एक ही समय में बहुत से कार्य करते हैं, हिलते-डुलते रहते हैं। यहाँ भी जाना है, वहाँ भी जाना है, यह भी कर लें, वह भी कर लें। यह राजसिक गुण में आता है।

तामसिक अर्थात् कुछ भी न करने का मन होना, यूँ ही बैठे रहना, आलस करना, निद्रा, यह सब तामसिक गुण होते हैं। यदि हम दस, बारह घण्टे सोते हैं तो हमारा तामसिक गुण बढ़ता है। संसार रूपी पेड़ इन तीन गुणों से बढ़ता हैं।

साधारण पेड़ में हमें खाद-पानी डालना पड़ता है तो वह बढ़ता है। यदि उसमें खाद-पानी न डालें तो वह मुरझा जाएगा, सूख जाएगा, वैसे ही तीनों गुणों के अभाव में यह संसार रूपी पेड़ नहीं बढ़ेगा। समस्त संसार की रचना इन तीनों गुणों के आधार पर ही है। इन तीनों गुणों के मिलन से ही योनियाँ उत्पन्न होती है। चौरासी लाख योनियों में मनुष्य योनि को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। हम मनुष्य योनि में इच्छा अनुसार सब कुछ कर सकते हैं।

तीन मुख्य योनियाँ होती हैं- देव योनि, मनुष्य योनि, तिर्यक योनि। तिर्यक योनि में पशु, पक्षी, कीट, पतङ्गे आते हैं। ऊपर देव, बीच में मनुष्य और नीचे तिर्यक अर्थात् कीट पतङ्गे माने गए हैं।

अहंता-ममता अर्थात् मैं और मेरा। इसी से कर्म बन्धन निर्माण होता है और इससे हम बँधते जाते हैं। संसार में कहीं, कुछ भी हो हमें इतना फर्क नहीं पड़ता, परन्तु यदि हमारे घर में, हमारे मित्रों के बीच कुछ बात होती है तो हमें फर्क पड़ता है, क्योंकि मैं और मेरे से ही सारा प्रपञ्च है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, इनकी आसक्ति से ही हम कर्म में बँधते जाते हैं। शब्द अर्थात् सङ्गीत। हमें भजन सुनना अच्छा लगता है, गाना सुनना अच्छा लगता है।

आपने श्रीकृष्णजी का चित्र देखा होगा। उनके आसपास हिरण दिखाई देते हैं क्योंकि श्रीकृष्ण बाँसुरी बजाते हैं। हिरण को सङ्गीत बहुत प्रिय है। शेर आसानी से हिरण का शिकार नहीं कर पाता क्योंकि हिरण बहुत तेज भागता है परन्तु शिकारी आसानी से हिरण का शिकार कर लेते हैं। शिकारी को हिरण की कमजोरी का पता होता है। हिरण की कमजोरी होती है शब्द,

मधुर सङ्गीत। शब्द के कारण वह जाल में फँस जाता है।

रस, का उदाहरण हम मछली के द्वारा समझते हैं। मछली रस के कारण काँटे में फँस जाती है।

रूप के आकर्षण में, कीट पतङ्गे रोशनी से आकर्षित होते हैं। आपने देखा होगा कई कीट पतङ्गे, बिजली की रोशनी और दीपक की रोशनी से टकरा कर मर जाते हैं।

गन्ध को हम भँवरे के उदाहरण से समझते हैं। भँवरे के दाँत बड़े मजबूत होते हैं, वह पेड़ में भी सुराख कर सकते हैं। भँवरे को कमल के पुष्प की सुगन्ध बहुत प्रिय होती है। जब कमल का पुष्प खिलता है, भँवरा उसमें जाकर बैठ जाता है। भँवरा सुगन्ध में इतना मग्न हो जाता है कि कमल का पुष्प कब बन्द हो जाता है? उसे पता ही नहीं चलता। भँवरे का डङ्क तेज होता है वह पुष्प में से बाहर आ सकता है किन्तु गन्ध की आसक्ति के कारण वह बाहर नहीं आ पाता। कमल का पुष्प हाथी के पैरों तले रौंदा जाने पर भँवरा उसी में मर जाता है।

हमने देखा कि किसी एक रस में आसक्ति होने के कारण पशु अपनी इन्द्रियों पर नियन्त्रण नहीं रख पाते और जान से हाथ धो बैठते हैं, तो हम मनुष्यों में तो इन पाँचों रसों में आसक्ति होती है।

उत्तम योगियों में, ममता और अंहता का नाश हो जाता है क्योंकि वे श्रीभगवान की भक्ति करते हैं।

15.3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते, नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं(म्) सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा।।3।।

इस संसार वृक्ष का (जैसा) रूप (देखने में आता है), वैसा यहाँ (विचार करने पर) मिलता नहीं; (क्योंकि इसका) न तो आदि है, न अन्त है और न स्थिति ही है। इसलिये इस दृढ़ मूलों वाले संसार रूप अश्वत्थ वृक्ष को दृढ़ असङ्गता रूप शस्त्र के द्वारा काटकर –

विवेचन- श्रीभगवान कह रहे हैं, संसार को समझने के लिए उल्टे वृक्ष की कल्पना करनी है। संसार का कोई आदि और अन्त नहीं होता है। आसक्तियों के कारण हम श्रीभगवान से दूर होते जाते हैं। यदि हम श्रीभगवान को याद करें, उनका स्मरण करें तो हम इन आसक्तियों से दूर हो सकते हैं।

आसक्तियों को कैसे दूर करेंगे? वैराग्य रूपी शस्त्र से आसक्ति को काटना है। हमारी जो बुरी आदतें हैं वे हमें धीरे-धीरे छोड़नी हैं। जैसे हमें जल्दी उठने की आदत डालनी है तो हमें सङ्कल्प लेकर एक अनुसूची (schedule) बनानी पड़ेगी। हम छः घण्टे मोबाइल चलाते हैं, तो यह आदत बदलने के लिए हम धीरे-धीरे मोबाइल चलाने का समय कम कर सकते हैं। यह वैराग्य और अभ्यास से सम्भव हो सकता है। अब जो हमारा आनन्द उत्सव होगा उसमें हम सङ्कल्प लेकर हमारी बुरी आदतें छोड़ सकते हैं। आप यह सङ्कल्प ले सकते हैं कि हम प्रतिदिन स्वाध्याय करेंगे, नित्य पूजा करेंगे, माता-पिता के चरण स्पर्श करेंगे। अच्छी-अच्छी आदतें जीवन में लाने का प्रयास करेंगे।

15.4

ततः(फ्) पदं(न्) तत्परिमार्गितव्यं(यँ) यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।

तमेव चाद्यं(म्) पुरुषं(म्) प्रपद्ये यतः(फ्) प्रवृत्तिः(फ्) प्रसृता पुराणी॥15.4॥

उसके बाद उस परमपद (परमात्मा) की खोज करनी चाहिये जिसको प्राप्त होने पर मनुष्य फिर लौटकर संसार में नहीं आते और जिससे अनादिकाल से चली आने वाली (यह) सृष्टि विस्तार को प्राप्त हुई है, उस आदिपुरुष परमात्मा के ही मैं शरण हूँ।

विवेचन- हम इस संसार में क्यों आए हैं? जिस तरह छुपन-छुपाई का खेल होता है वैसे ही श्रीभगवान भी एक खेल खेलते हैं। श्रीभगवान ने हमें अपने घर से यहाँ इस संसार में भेजा है। हम यहाँ आकर अपना घर भूल जाते हैं। हमें श्रीभगवान को भूलना चाहिए क्या? हमें श्रीभगवान को नहीं भूलना है। हमें निरन्तर श्रीभगवान का स्मरण करते रहना चाहिए। प्रतिदिन श्रीभगवान की पूजा करनी है, नाम जप करना है। मन्दिर के सामने से निकलें तो सर झुकाकर प्रणाम करना चाहिए। ऐसे धीरे-धीरे अभ्यास से आदत बनती है।

15.5

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा, अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः(स्) सुखदुःखसञ्ज्ञैः(र्), गच्छन्त्यमूढाः(फ्) पदमव्ययं(न्) तत्।।5।।

जो मान और मोह से रहित हो गये हैं, जिन्होंने आसक्ति से होने वाले दोषों को जीत लिया है, जो नित्य-निरन्तर परमात्मा में ही लगे हुए हैं, जो (अपनी दृष्टि से) सम्पूर्ण कामनाओं से रहित हो गये हैं, जो सुख-दुःख नाम वाले द्वन्द्वों से मुक्त हो गये हैं, (ऐसे) (ऊँची स्थिति वाले) मोह रहित साधक भक्त उस अविनाशी परमपद (परमात्मा) को प्राप्त होते हैं।

विवेचन- हम श्रीभगवान को क्यों नहीं ढूँढते? हमारी जो यह आसक्ति है कि यह मेरा पेन है, यह मेरा शर्ट है, यह मेरा टीवी है। जब हम इस तरह से "मैं और मेरा" करते रहते हैं तब संसार में जो वस्तु हमें मिल रही है, उसमें हम आसक्त हो जाते हैं। उसमें ही रम जाते हैं। हमें श्रीभगवान को भूलना नहीं है।

हमें प्रतिदिन श्रीभगवान को याद करते रहना चाहिए। किसी भी वस्तु से ज्यादा आसक्ति नहीं रखनी है। सुख और दु:ख में समान रहना है, उसमें ज्यादा आसक्त नहीं होना है। यदि हमारे मन का न हुआ तो हमें बहुत अधिक दु:खी नहीं होना चाहिए और मन का हो जाए तो बहुत अधिक प्रसन्न नहीं होना चाहिए।

15.6

न तद्भासयते सूर्यो, न शशाङ्को न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते, तद्धाम परमं(म्) मम।।6।।

उस (परमपद) को न सूर्य, न चन्द्र (और) न अग्नि ही प्रकाशित कर सकती है (और) (जिसको) प्राप्त होकर जीव लौट कर (संसार में) नहीं आते, वही मेरा परम धाम है।

विवेचन- हम विज्ञान (science) में पढ़ते हैं कि विद्युत का मुख्य स्रोत क्या है?

(Q. What is the main source of light according to science?

Ans. According to science, main source of light is Sun.)

विद्युत का मुख्य स्रोत सूर्य है, लेकिन श्रीभगवान इस श्लोक में बता रहे हैं कि प्रकाश, ऊर्जा का स्रोत मैं हूँ। श्रीभगवान कहते हैं कि सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि जो रोशनी देते हैं, प्रकाश देते हैं, वह मेरे द्वारा ही उन्हें प्राप्त होती है। मेरे बिना उनका कोई अस्तित्व नहीं है। जो यह ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं वे पुन: लौटकर इस संसार में नहीं आते हैं।

भगवन्नाम सङ्कीर्तन के साथ सत्र का समापन हुआ।
हरिशरणम् ,हरि्शरणम, हरिशरणम्

प्रश्नोत्तर -

प्रश्नकर्ता- श्री रक्षा दीदी
प्रश्न- श्रीभगवान हम सभी को अच्छे कर्म करने का अवसर देते हैं, फिर सभी अच्छे कर्म करेंगे तो बुराई का नाम ही नहीं होगा?
उत्तर- श्रीभगवान ने बुरा किसी को नहीं बनाया है। हम सब में अच्छाई-बुराई दोनों ही होती है। एक हाथ में अमृत का घड़ा है तो दूसरे हाथ में विष का, अब यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम अपने जीवन में किसका उपयोग करें, जैसे बहुत से लोग गीता कक्षा में आते हैं और बहुत से लोग जानते हुए भी नहीं आते, अपने कर्मों के अनुसार ही हम अपना मार्ग तय करते हैं।

प्रश्नकर्ता- उत्कर्ष भैया
प्रश्न- देव योनि का क्या अर्थ क्या है?
उत्तर- देव योनि का मतलब देवता का शरीर, देवता के शरीर में मलिनता नहीं होती, वे दीर्घकाल तक इसी योनि में रहते हैं। देव योनि में प्रतिबन्ध कम होते हैं। वे कितना भी उपभोग कर सकते हैं। हम सब इस समय मनुष्य योनि में हैं, हमारी आयु कम है, हममें मलिनता अधिक है, हम अधिक से अधिक सौ वर्ष तक जीवित रह सकते हैं।

प्रश्नकर्ता- पार्थ्वी दीदी
प्रश्न- क्या हमें न्यूमेरोलॉजी की बात माननी चाहिए?
उत्तर- आपके माता पिता क्या बोल रहे हैं? इस पर निर्भर करता है। बड़ों की बात माननी चाहिये। ऐसी बातों पर बहुत ज़्यादा विश्वास नहीं करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता- सिन्धुजा दीदी
प्रश्न- रजोगुण क्या है?
उत्तर- जब हम बहुत ज़्यादा इच्छा करते हैं या हम दूसरों से बहुत ज़्यादा जुड़ जाते है, ज़्यादा ज़िद करते हैं तो वह रजो गुण कहलाता है।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||